© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 04 , Issue : 07 | October - December 2018

मानव उत्कर्ष में प्रत्याहार की भूमिका – एक अध्ययन

डा0 विरेन्द्र कुमार, अंशुल

[1]सहायक प्राध्यापक, योग विज्ञान , चौ. रणबीर सिंह विश्वविद्यालय, जीन्द।
[2]एम.ए. योग द्वितीय वर्ष , चौ. रणबीर सिंह विश्वविद्यालय, जीन्द।

सारांशः–

आज हम देखते हैं कि विज्ञान के क्षेत्रा में तो मानव में बहुत उन्नति कर ली है। लेकिन दूसरी तरपफ नई–नई बिमारियों का जन्म हो रहा है। मनुष्य के संस्कार विलुप्त होते जा रहे है। वह संस्कारों को भूलकर अनेक बूरी आदतों का शिकार हो रहा है। जैसे मादक पदार्थो का सेवन अपहरण, भ्रुणहत्या, रिश्वतखोरी, बलात्कार, माँस भक्षण के प्रति आशक्ति आदि। बड़े दुख की बात तो यह है कि लड़कियाँ भी इन सबका शिकार हो रही है। जिसके कारण छोटी उम्र में ही उनके चेहरे का नूर गायब हो चुका है। वे अनेक झूठे ढोंगी संतों के चंगुल में पफँस कर रह गई है। जो भक्ति के नाम पर लड़कियो का शोषण करते है। लेकिन यह सब इसलिए हो रहा है क्योंकि मनुष्य का अपनी इन्द्रियों पर नियंत्राण नही है। वह अपनी इन्द्रियों का सदुपयोग नही कर पा रहा है। इसके लिए हमें अपनी इन्द्रियों को विषयो से हटाकर अर्न्तमुखी बनाना है क्योंकि इन्द्रियों का विषयों से संपर्क होने पर विषयाशक्ति की भावना जाग जाती है। हम इस शक्ति को बचाकर साध्ना के कार्यो में लगा सकते है।

प्राचीनकाल में हमारे ट्टषियों ने अपनी शक्ति को परमात्मा की प्राप्ति, परमात्मा की साध्ना, उनका गुणगान करने मे ही लगाया था। क्योंकि उन्होंने अपनी इन्द्रियों को नियंत्राण में कर रखा था। जिस प्रकार किसी पशु को हम अगर भरपेट भोजन देंगे तो वह शक्तिशाली बनेगा। लेकिन पर्याप्त आहार न मिलने पर वह दुर्बल बन जाता है। इसी प्रकार अगर इन्द्रियों को भी उनका आहार विषय न ग्रहण करने दिया जाए तो वे भी दुर्बल होकर विषयों से दूर हो जाती है। लेकिन वर्तमान में मानव की इन्द्रियाँ इतनी बलशाली हो गई है कि जिनकों नियंत्राण में करने के लिए हमे महर्षि पंतजलि द्वारा वर्णित अष्टांग योग के पाँचवे अंग प्रत्याहार को अपने जीवन में अपनाना होगा। जिसके द्वारा इन समस्याओं से छुटकारा पाया जा सकता है। इन समस्याओं से निपटने के लिए योजनाएँ तो बहुत बनाई जा चुकी है लेकिन किसी का भी ध्यान योग की शिक्षा की तरपफ नही गया। बच्चों को बचपन से ही प्रत्याहार के बारे में जानकारी देनी चाहिए। ताकि वे भविष्य में अपनी इन्द्रियों पर नियंत्राण करने मे कठिनाई अनुभव न करें। अब वह समय आ गया है कि हमे मानव के जीवन मे योग को उतारना होगा। ऐसा होने पर ही मानव–उत्कर्ष संभव है। वह प्रगति के शिखर पर पहुँच सकता है।

मुख्य शब्दः– योग, प्रत्याहार, इन्द्रियाँ, नियंत्राण।

भूमिकाः–

प्रत्याहार दो शब्दो से मिलकर बना है प्रति+आहार। प्रति का अर्थ विपरित तथा आहार का अर्थ है भोजन अर्थात् इन्द्रियों का अपने भोजन से विपरित हो जाना ही प्रत्याहार है।

जब इन्द्रियाँ अपने–अपने विषयों वेफ संपर्क में नहीं आ पाती तो चित्त के स्वरूप वेफ समान ही उनका स्वरूप हो जाता है। इन्द्रिया विषयों की और न जाकर चित्त में विलिन हो जाती है। इन्द्रियों वेफ विषयों के साथ संबंध टूट जाता है।[1] इन्द्रियों का अपने–अपने विषयों के साथ संयोग न होने पर चित्त के स्वरूप का अनुकरण करना अर्थात् चित्त वेफ निरू(होने पर चित्त के समान इन्द्रियाँ निरू(हो जाती है। इतर इन्द्रियजय के समाना दूसरे उपाय की अपेक्षा नही रखती।[2]

चित्त निरोध् होने पर इन्द्रियों का निरोध् साध्न रूप प्रत्याहार ही योगियो को उपायदेय होता है।[3] यदि तुम चित्त के सब विभिन्न आकृतियाँ धरण करने से रोक सको, तभी तुम्हारा मन शांत होगा और इन्द्रियाँ भी मन के अनुरूप

हो जाएगी। इसी को प्रत्याहार कहते है।[4] प्रत्याहार का अर्थ पीछे हटना, उल्टा हटना, विषयों से विमुख होना। इसमें इन्द्रियाँ अपने बर्हिमुखी विषय से पीछे हटकर अर्न्तमुखी होती है।[5]

इन्द्रियों का विषयो से अलग होना ही प्रत्याहार है। जिस समय साध्क अपने साध्नाकाल मे इन्द्रियों के विषयों का परित्याग कर देता है और चित्त को अपने इष्ट में एकाकार कर देता है, तब उस समय जो चिंतन इन्द्रियों के विषयों की तरपफ न जाकर चित्त मे समाहित हो जाता है, वही प्रत्याहार सि(की पहचान है।[6] जहाँ–जहाँ पर चंचल मन विचरण करे इसे वहीं से लौटाने का प्रत्यन करते हुए आत्मा के वश में करें।[7]

श्रीमद् भगवत् गीता मे कहा है – यह स्थिर न रहने वाला अत्यंत चंचल मन जिस विषय के पीछे संसार मे विचरता है, उस–उस विषय से हटाकर बार–बार परमात्मा के चिंतन मे ही लगाते रहना चाहिए।[8] चक्षु आदि पाँच ज्ञानेन्द्रियो के रूप, रस, गंध, स्पर्श और शब्द यह पाँच विषय है। इनमें इन्द्रियों द्वारा उनके विषय का अनुभव करके उन–उन इन्द्रियों के अपने–अपने विषय से पृथक कर लेना ही प्रत्याहार है।[9] जिस प्रकार कछुआ अपने पैर समेट लेता है अथवा एक गरीब जाड़ो में अपने अंगो का समेट कर सोता है।[10]

इसी प्रकार बु(रूपी ज्ञान के द्वारा अपनी इन्द्रियों पर नियंत्राण करना चाहिए। उन्हें अपनी और खींचना चाहिए ताकि वह अपने विषयों का उपभोग न कर सकें।[11] गोरक्ष प(ति मे भी यही कहा गया है कि मनुष्य को भी कछुए की तरह अपनी इन्द्रियों को सिकोड़ना चाहिए अर्थात विषयों से हटाकर अन्तर्मुखी करना चाहिए।[12]

गीता में श्रीकृष्ण ने बताया कि इन्द्रियाँ बहुत बलशाली है। वे विषयाभिमुख पुरूष को भी क्षुब्ध कर देती है और मन को बलात् हरण करके अपने अनुवूफल बना लेती है। बु(िमान पुरूष को अपनी इन्द्रियों को वश मे कर लेना चाहिए। जिसकी इन्द्रियाँ वश मे हो जाएगी। उसकी बु(को प्रतिष्ठित हुए बिना कोई नही रोक सकता। विद्वान योगी विषयो मे विचरण करने वाली इन्द्रियों को यत्नपूर्वक वश मे रखते है इसलिए उनके योग मे सि(मिल जाती है। स्वविषयो मे विचरती हुई इन्द्रियों मे से मन जिस इन्द्रिय के साथ रहता है। वह एक ही इन्द्रिय योगी की बु(को हर लेती है जैसे समुद्र मे चलती नौका को पथभ्रष्ट करके झ×झावात का एक झोंका नाविक सहित नौका को डूबो देता है। उसे उसके निश्चित स्थान पर नहीं पहुँचने देता। श्रीकृष्ण ने बताया कि राग द्वेष को लेकर ही इन्द्रियों की स्वाभाविक प्रवृत्ति विषयों में हुआ करती है परन्तु जिनकी बु(आत्मा के वश मे हो गई अथवा आत्मचिंतन और ब्रह्मचिंतन मे लगी रहती है। ऐसे योगियो की बु(मे से ये राग द्वेष भाग जाते है।[13]

कठोपनिषद् में बताया है कि जिस मूढमति का मन बु(के वश मे नही है उसकी इन्द्रियाँ भी वश मे नही रहती जैसे बलवान किन्तु चपल घोड़े बिगड़कर दुर्बल सारथि के वश मे नहीं आते। इतस्ततः खचस्त्रे खाई मे जा पैंफकते है परन्तु जो बु(िमान व्यक्ति बलशाली होता है, जिसका मन उसके वश में है, उसकी इन्द्रियाँ वश में रहकर सध् घोड़े के समान बु(सारथि के आदेशानुसार चलती है। जिसका बु(रूपी सारथि सावधन है, मनरूपी लगाम उसके हाथ मे अध्किारपूर्वक आया है, इन्द्रिय रूप घोड़े भी उसके वश मे ही रहते है। वे श्रेय–पथ के कठिन दुर्गम पथ मे सारथि के आदेशानुसार चलते हुए परमशांत विष्णुपद मे रथी आत्मा को सुरक्षित ही पहुँचा देते है। बिना इन्द्रिय निरोध के भव–पाश से मुक्त होना सर्वथा ही असंभव है। मानव के बंध्न के हेतु ये विषय और विषयानुगामिनी इन्द्रियाँ ही है। जब तक पूर्ण रूप से इन पर आध्पित्य नही होगा। तब तक प्रत्याहार की सि(भी संभव नही होगी तथा प्रत्याहार की सि(के अभाव में योगासि(संभव नही बन सकती।[14]

हठयोग मे बताया है कि जिस प्रकार चन्द्रमा की अमृतमयी धरा को सूर्य ग्रसता है, उसे सूर्य से हटाकर स्वयं ग्रस लेना ही प्रत्याहार है।[15] शारदा तिलक ने कहा है कि ये इन्द्रियाँ विषयो मे बेरोक–टोक दौड़ते रहने से चंचल रहती है अतः उन विषयो से इन्द्रियों का निरू(कर मन को स्थिर करना चाहिए।[16]

वशिष्ठ संहिता में प्रत्याहार के चार अंगो के बारे मे बताया है कि हे! त्पोध्न पहले इन चार योगाघगो का निरूपण किया गया है। अब प्रत्याहार आदि चार आन्तरिक योगाघगो को सुनो विषयो में स्वाभाविक रूप से विचरने वाली इन्द्रियों को उनसे बलपूर्वक पीछे लौटाना चाहिए। जो वुफछ भी दिखाई देता है उन सभी को

आत्मा के समान आत्मा मे ही देखें। शरीरधरियो के लिए जो नित्य–विहित कर्म है, उनका बाह्य साध्नों के बिना मन से ही आत्मा मे अनुष्ठान करना चाहिए। अभ्यास मे लगे हुए योगी सदा उस प्रत्याहार की प्रशंसा किया करते है, जिसमे अठारहो मर्मस्थानो पर वायु का स्थिर करनाऋ पिफर एक–एक स्थान से वायु को उचित रीति से खींचना होता है।[17]

गोरक्षनाथ ने बताया कि कानो मे जो–जो प्रिय या अप्रिय शब्द सुनाई देता है, उनमें मन भी आसक्त हो जाता है। इसलिए श्रोत्त इन्द्रियों के विषयरूपी शब्दो से मन को हटा लेना ही प्रत्याहार है। गन्ध से सुगन्ध और अगन्ध से दुर्गंध कहने का अभिप्राय समझना चाहिए। गन्ध नासिका का विषय है और वह गन्ध मन को भ्रम में डालने वाली होती है। सुगन्ध से मन लालायित होता है और दुर्गंध से घृणा उत्पन्न होती है। नासिका की यह वृति भी साध्क को साध्ना से विमुख करती है इसलिए गन्ध का त्याग करना चाहिए। नेत्राो के द्वारा पवित्रा और अपवित्रा दृश्यो को देखने से उनमें आसक्ति हो सकती है। क्योंकि दोनो प्रकार के ही पदार्थ मन को भ्रम मे डालकर साध्ना से विमुख कर सकते है। यदि उन सब पदार्थो मे आत्मभाव रखकर उनका त्याग कर देने रूप से प्रत्याहार साध्क के लिए अवश्य ही श्रेयस्कर हो सकता है। त्वक इन्द्रिय का स्पर्श है मृदु या कठोर अथवा ठंड़े या गर्म पदार्थ का अनुभव त्वचा से ही हो सकता है। अनेक पदार्थ ऐसे है जो मन को स्पर्श–सुख मे लीन कर देते है। उस अवस्था से साध्ना से विमुख हो जाना स्वाभाविक है। तात्पर्य यह है कि स्पर्श मे सुख देने वाला पदार्थ हो या दुख का अनुभव कराने वाला पदार्थ हो साध्ना से विघ्न स्वरूप ही है इसलिए सभी स्पृश्य, अस्पृश्य पदार्थो को आत्मवत मानकर उनका परित्याग करना ही कल्याणकारी है। इसे त्वचा के विषयो से चित्त को हटा लेने स्वरूप समझना चाहिए। जिह्वा का विषय रस है यह अनेक स्वादिष्ट और अस्वादिष्ट पदार्थो का सेवन करती है। जो योगी यह मान लेता है कि संसार में जो वुफछ है वह आत्मवत् है और पदार्थो को आत्मा के समान मानकर उनका त्याग कर देता है। वह प्रत्याहारी योगी यथार्थ मे योग को जानने वाला है।[18]

भक्तिसागर में चरणदास कहते है कि ज्यों–ज्यों इन्द्रियों का उनके विषय भोगों की प्राप्ति होती है वे दिन–प्रतिदिन बलवान होती जाती है। जब उन्हे भोग की वस्तु नही मिलती है तब वे उस बल से वंचित रह जाती है। चरणदास जी कहते है कि सुन्दर रूप–स्वरूप का उपभोग आँखे करती है और नाक का विषय है सुगन्ध। छः रसो का भोग जीभ करती है और सूरीले शब्दों का उपयोग कान करता है। स्पर्श का उपभोग त्वचा करती है। इन सबसे अध्कि विकारो का जन्म होता हैऋ यही पाँच इन्द्रियाँ है और इनका यही भोजन है। इन्ही सब विषयो से मिलकर मन वुफछ का वुफछ हो गया इसलिए इन्द्रियों का वश में करना चाहिए ताकि मन वश में हो जाए।[19]

प्रत्याहार का अर्थ है आत्मा के घोड़ो का विषयो से लौटा लेना उनके दोषों के मिटा देना उत्पन्न हो रहे विकारो की भी निवृति होना यह प्रत्याहार का लक्षण है।[20] विष्णु पुराण मे कहा गया है कि शब्दादि विषयो में आशक्ति का निग्रह करें और अपने–अपने विषयों से निरू(इन्द्रियों का चित्त का अनुकरण करने वाला बनावें। यह अभ्यास प्रत्याहार का रूप धरण कर लेता है।[21] स्वविषयो मे जो इन्द्रियाँ प्रसक्त रहती है उनका निग्रह करना भी प्रत्याहार के अन्तर्गत ही आता है।[22]

चरणदास कहते है कि ज्यों–ज्यों प्राण हमारे वश मे आते है त्यों–त्यों मन वश मे होता जाता है। जब हमारी इन्द्रियाँ स्थिर अर्थात् वश मे हो जाती है तब विषयो की महत्ता ही खत्म हो जाती है।[23] नित्यकर्म और वेदोक्त कर्मो के पफल का त्याग कर देना प्रत्याहार ही है।[24]

मनुस्मृति में प्राणायाम के महत्त्व को बताते हुए कहा है कि जैसे स्वर्ण–रजत आदि धतुओं के दोष भट्टड्डी मे तपाने से दूर हो जाते है। इसी प्रकार प्राणायाम के द्वारा प्राण निरोध करने से विषयानुसारिणी इन्द्रियाँ विषयाशक्ति को त्यागती जाती है। इसलिए ऐसा निर्देश है कि प्राणायाम वेफ द्वारा राग आदि का नाश करें और धरणाओं के द्वारा पाप का प्रत्याहार के द्वारा विषयों के प्रति बनें इन्द्रियों के आकर्षण का – सन्निकर्ष का, तथा ध्यान की प्रबलता से नास्तिकता, क्रोध, लोभ असूया आदि दुर्गुणों क नाश करें। मनस्वी योगी को प्रत्येक इन्द्रिय

के विषय को वश में करने का यत्न अति सावधनी से करना चाहिए। अन्यथा एक इन्द्रिय के विषय की प्रबलता भी महाकष्ट का कारण बन जाती है।[25]

चरणदास का कथन है कि हमे सबसे पहले प्राणों को वश में करने के लिए प्राणायाम करना चाहिए क्योंकि प्राणायाम ही सब वुफछ है। प्राणायाम करने के बाद प्रत्याहार करना चाहिए।[26] श्रीकृष्ण कहते है बाहर के विषयभोगो को न चिंतन करता हुआ बाहर ही निकालकर और नेत्राों की दृष्टि को भृवुफटी के बीच में स्थित करके तथा नासिका में विचरने वाले प्राण और अपान वायु को सम करके जिसकी इन्द्रियाँ मन और बुि(जीती हुई हैऋ ऐसा जो मोक्षप्राण मूनि इच्छा, भय और क्रोध से रहित हो गया है, वह सदा मुक्त ही है।[27]

जब व्यक्ति प्राणायाम करता है तो मन की चंचलता रूक जाती है। उनकी चंचलता रूक जाने पर योगी स्थिर बुि(से उनके दोषों को जानकर उनको दूर करने में समर्थ हो जाती है। उनके दोषों को दूर कने से शुभ संस्कार विकसित होते है और अज्ञान का नाश होता है। प्राणायाम करने से मन–इन्द्रियों पर योगी का अध्किार हो जाता है। उससे वह विध्पिूर्वक ईश्वर की उपासना करने मे सपफल हो जाता है। इस स्थिति मे उसको ईश्वर विद्या प्रदान करता है। उस विद्या से अविद्या का नाश हो जाता है।[28]

महर्षि पंतजलि कहते है कि प्रत्याहार का अभ्यास पूर्ण होने पर इन्द्रियाँ पूर्ण रूप से योगी के वश मे हो जाती है। यही प्रत्याहार का परिणाम है। इसी का नाम है इन्द्रियजय अर्थात् इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर लेना। चित्त की एकाग्रता होने पर इन्द्रियों की शब्दादि विषयों में प्रवृत्ति सदा रूक जाती है। इसी को इन्द्रियजय कहते है यह इन्द्रियजय ही प्रत्याहार का पफल है।[29]

''चित्त की एकाग्रता होने पर विषयों की और इन्द्रियों की जो अप्रवृति है अर्थात् विषय संयोग–शून्यता है वही इन्द्रियजय है।''[30] स्वामी विवेकानन्द – ''जब इन्द्रियाँ पूरी तरह विजित हो जाती है, तक एक–एक स्नायु, माँसपेशी तक हमारे वश में आ जाती हैं, क्योंकि इन्द्रियाँ ही सब प्रकार की संवेदना और कार्य की केन्द्रक है।[31] पंड़ित श्रीराम शर्मा आचार्य ने कहा कि प्रत्याहार की सिि(के पश्चात् इन्द्रिय–जित होने के लिए योगी को पिफर अन्य किसी साध्न की आवश्यकता नही रह जाती।[32]

निष्कर्षः–

अतः प्रत्याहार से हम न वेफवल सामाजिक समस्याओं बल्कि व्यक्तिगत दुःखो–शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक दुःखो से भी छुटकारा पा सकते है। हम कई बार ऐसा कार्य कर देते है जो हमें नही करना चाहिए था लेकिन यह सब इन्द्रियों पर नियंत्राण न होने के कारण होता है। इन सभी समस्याओं का समाधन योग मे निहित है। हम योग या यौगिक क्रियाओं के द्वारा अपनी इन्द्रियों को नियंत्राण में कर सकते है और इन्द्रियों को विचलित होने से बचाया जा सकता है। इसके समाधन के लिए हमे महर्षि पंतजलि द्वारा रचित योगसूत्रा का अध्ययन करना चाहिए। वर्तमान युग मे सामाजिक समस्याओं का ग्रापफ बढ़ता ही जा रहा है। अगर जीवन मे योग को अपनाएंगे तो इससे व्यक्ति और समाज दोनो का निर्माण होगा और प्रत्याहार को अपनाकर व्यक्ति का चरित्रा भी शु(हो जाएगा। अगर मानव और राष्ट्र का उद्धर करना है तो प्रिय लगने वाले विषयो को त्यागना होगा। इन्द्रियों को अपनी और खींचना होगा। मानव बहुत हद तक गिर चुका है, उसे प्रगति के शिखर तक पहुँचने के लिए अपने चरित्रा को उफपर उठाना होगा और यह केवल योग के माध्यम से ही संभव है इसलिए हे मानव योग की शिक्षा गहण करों।

संदर्भ–सूची

1. ''स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः'' योग सूत्रा 2/54
2. स्वविषयसंप्रयोगाभावे चित्तस्वरूपानुकार इवेति चित्तनिरोधे
चित्तवन्निरू(ानी न्द्रियाणि नेतरेन्द्रिय जयवदु पायान्तरमपेक्षन्ते। महर्षि व्यास भाष्य 2/54
3. स्वामी हरिहरानंद आरण्य पातंजल योगदर्शन 2/54 पृष्ठ–285
4. स्वामी विवेकानन्द राजयोग, पृष्ठ–179

5. स्वामी ओमानंदतीर्थ — पत×जल योग प्रदीप, पृष्ठ–521
6. पंड़ित श्रीराम शर्मा आचार्य — सांख्यदर्शन एवं योगदर्शन, पृष्ठ–65
7. यतो–यतो निश्चरति मनश्चंचलमस्थिरम्।
   ततस्ततों नियम्यैतदात्मन्येव वंश नयेत्।। — 4/2 घेरण्ड संहिता।
8. यतो–यतो निश्चरति मनश्चंचलमस्थिरम।
   ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वंश नयेत्।। — 6/26 श्रीमद् भगवद्गीता।
9. चरतां चक्षुरादीनां विषयेषु यथाक्रमम्। यत्प्रत्याहरणं
   तेषां प्रत्याहारः स उच्यते। — 2/22 गोरक्ष संहिता।
10. जैसे कछुआ अंग समेटे। रंक शीतकाला मे लेटे।। — भक्तिसागर अष्टांग योग। 128
11. ऐसे ही बुि(ज्ञान सों, पांचो इन्द्री रोक।
    विषय ओरसों पेफरिये, लहै न अपना भोग।। — भक्तिसागर अष्टांग योग। 129
12. अंगमध्ये यथांगान वूफर्मः संकोचयेद् ध्रुवम्।
    योगी प्रत्याहरेदेवमिन्द्रियाणि तथात्मनि।। — गोरक्ष संहिता 25
13. इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभ मनः। — गीता 2/60
    वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठता। — गीता 2/62
    इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनो{नुविध्यिते।
    तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि।। — गीता 2/67
    रागद्वेष वियुक्तैसु विषयानिन्द्रियैश्चरन्।
    आत्मवश्यैर्विध्यात्मा प्रसाद मध्गिच्छति।। — गीता 2/64
14. यस्तु विज्ञानवान भवति युक्तेन मनसा सदा।
    तस्येन्द्रियाणि वश्यानि सदश्वा इव सारथे।। — कठोपनिषद वल्ली 2अं1 मं 5
    यस्तवविज्ञानवान् भवव्ययुक्तेन मनसा सदा।
    तस्येन्द्रियाव्यवश्यानि दुष्टाश्वा इव सारथेः।। — कठोपनिषद वल्ली 2अं1 मं 6
    विज्ञानसारर्थियस्तु मनः प्रग्रहवान्नरः।
    सो{ध्वनः पारमाप्नोति तद्विष्णोः परम पदं।। — कठोपनिषद वल्ली 2अं3 मं 9
15. चन्द्रामृतमयी धरां प्रतहरति भास्करः।
    प्रत्याहरणं तस्याः प्रत्याहारः स उच्यते।। — हठयोग 30
16. इन्द्रियाणां विचरतां विषयेषु निरगलन।
    बलदाहरणं तेभ्य प्रत्याहारो{भिधियते।। — शारदा तिलक 25/23
17. उक्तान्येतानि चत्वारि योगाड़गनि तपोध्न।
    प्रत्याहारादि चत्वारि श्रृणुष्वाश्यन्तराणि च।। — वशिष्ठ संहिता 3/57
    इन्द्रियाणां विचरतां विषयेषु स्वभावतः।
    बलदाहरणं तेषां प्रत्याहारः स उच्यते।। — वशिष्ठ संहिता 3/58
    यद्यत् पश्यति तत् सर्व पश्येदात्मवदात्मनि।
    प्रत्याहारः स च प्रोक्तो योगविदिभर्महात्मभि।। — वशिष्ठ संहिता 3/59
    कर्माणि यानि निव्यानि विहितानि शरीरिणाम्।
    तेषामात्मन्यनुष्ठानं मनसा य(हिर्विना।
    प्रत्याहारो भवेत् सो{पि योगसाध्न भुत्तमम्।। — वशिष्ठ संहिता 3/60
    प्रत्याहारं प्रशसन्ति संयुता योगिनः सदा।
    अष्टादशसु य(ायोर्मर्मस्थानेषु धरणम्।
    स्थानात् सीनात समाकृष्य प्रत्याहारः स चोत्तमः।। — वशिष्ठ संहिता 3/61
18. यं यं श्रुणोति कर्णाश्यामाप्रियं प्रियमेव वा।
    तं तमात्मेति विज्ञाय प्रत्याहरितं योगवित्। — गोरक्ष संहिता 25

अगन्ध्मथवा गन्ध्ं यं यं जिघ्रति नासिका।
तं तमात्मेति विज्ञाय प्रत्या हरति योगवित्। गोरक्ष संहिता 26
अमेध्यमथवा मेध्यं यं यं पश्यति चक्षुषा।
तं तमात्मेति विज्ञाय प्रत्याहरति योगवित्।। गोरक्ष संहिता 27
अस्पृश्यमथवा स्पृश्य यं यं स्पृशति चर्मणा।
तं तमात्मेति विज्ञाय प्रत्याहरति योगवित्।। गोरक्ष संहिता 28
लावण्यमलावण्य वा यं यं रसति जिहवया।
तं तमात्मेति विज्ञाय प्रत्याहरति योगवित्।। गोरक्ष संहिता 29

19. ज्यों–ज्यों इनको भोग दे, परबल होती जाहि।
बिना भेग होही नही, वह बल रहे जुनाहि।।
नेन जु भोगे रूप को, और गन्ध् को घ्रान।
षटरस भोगे जीभ ही, शबदहि भोगे कान।।
त्वचा भोगि अस्पर्श को, बाढ़े अध्कि विकार।
पांचौं इन्द्री जानि ले, इनको यही आहार।।
इनसे मिलिमिलि मनबिगडि, होय गया कछु और।
इन्द्री रोकै मन रूकै, रहे जु अपनी ठौर।। भक्ति सागर अष्टांग योग 129

20. प्रत्याहर इति चैतन्यत्तुर्य्चैांणां प्रत्याहरणं विकारग्रसनम।
उत्पन्न–विकारस्यापि निवृति भवति इति प्रत्याहार लक्षणम्।। सि(सि(ांत प(ति 2/36

21. शब्दादिष्वनुषक्तानि निगृह्याक्षणि योगवित्।
वुफर्याच्चित्तानुकारिणी प्रत्याहार परायणाः।। विष्णु पुराण

22. इन्द्रियाणि प्रसक्तानि यथार्स्व विषयेष्विह।
आहत्य यन्निगृांति प्रत्याहारः स उच्यते।। विष्णु पुराण

23. ज्यों–ज्यों होवे प्राण वश, त्यों–त्यों मनवश होय।
ज्यों–ज्यों इन्द्रि थिर रहै, विषयजायं सब खोय।। भक्तिसागर अष्टांगयोग 129

24. नित्य विहित कर्म पफल त्यागः प्रत्याहार। शांण्डिल्योपनिषद

25. तथेन्द्रियाणां दह्यान्ते दोषाः प्रावस्य निग्रहात्।
प्राणायामैर्दहेद्दोषान धरणाभिश्च किल्तिषम।
प्रत्याहारेण ससर्गान् ध्यानेनानीश्वरान गुणान्।। मनुस्मृति 6/71,72

26. ताते प्राणायाम करि, प्राणायमहि सार।
पहिले प्राणायाम कर, पीछे प्रत्याहार।। भक्तिसागर अष्टांगयोग 129

27. स्पर्शान्कृत्वा बहिबाह्याश्रच्क्षुश्रच्वान्तरे भ्रुवोः।
प्रणापानैः समौकृत्वा नासाभ्यन्तर चारिणौ।। गीता 5/27
यतेन्द्रियमनो बुर्(िर्मुनिमेक्षिपरायणः
विगतेच्ध्वभय क्रोधे यः सदा मुक्त एवं सः।। गीता 5/28

28. प्रणायामनश्यस्यतो{तस्य योगिन् क्षीयते विवेकज्ञान वरणीय कर्म।
यत्तदाचक्षते–महामोहमयेनेन्द्रजालेन प्रकाशशीलं सत्वमातृत्य तदेवा कार्ये नियुडक्त इति। योगदर्शन व्यासभाष्य 2/52

29. ततः परमा वश्यतेन्द्रियानम् पातजल योगसूत्रा 2/55

30. रागद्वेषाभावे सुख दुःख–शून्य शब्दादिज्ञानभिन्द्रियजय इति केचित्।
चितैकाग्रयादप्रतिपतिरेवेति जैगीषव्यः। योगदर्शन व्यासभाष्य 2/55

31. स्वामी विवेकानन्दं राजयोग पृष्ठ 179

32. पंड़ित श्री रामशर्मा आचार्य सॉंख्य दर्शन एवं योगदर्शन, पृष्ठ 66